शोध पत्र- हिन्दी

प्रसाद के कथा साहित्य में नैतिक मूल्य

* प्रेम सिंह मीणा

जब दूसरों के दुःख के प्रति हममें सहानुभूति, त्याग, उत्सर्ग अथवा बलिदान का भाव उमड़ता है तब मूल्यों की रक्षा संभव होती है। ''साहित्य में सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को स्थान देने से वे सांस्कृतिक श्रेष्ठता को जीवंत बनाने में सहायक होते हैं। जीवन मूल्य स्थायी विश्वास होते हैं।[1] नैतिक मूल्य निरन्तर गतिशील समाज के साथ विकसित होते रहते हैं और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में परिवर्तित होते रहते हैं। जीवन–मूल्यों के इर्द–गिर्द साहित्यकार अपने भावचेतन कलात्मक संसार की रचना करता है।

प्रसाद की मूल चिंता भारतीय समाज में नैतिक मूल्यों के ह्रास की है। मूल्यों की रक्षा के लिए मजबूती से उनके पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं ''मैं किसी के धार्मिक कृत्य में बाधा नहीं देना चाहता, किन्तु चारित्र्य विनाश और हिंसामूलक क्रियाओं को रोकना मेरा कर्तव्य है। मैं वेश्याओं से घिरी हुई देव प्रतिमा से घृणा करता हूँ।''[2] प्रसाद नैतिक मूल्यों की रक्षा के लिए व्यक्ति के चरित्र को महत्त्व देते थे। प्रसाद के अनेक पात्र चरित्र के उच्च आदर्शों को प्रस्तुत करते हैं समाज को उन्हीं चरित्रवान पात्रों की आवश्यकता है।

मानवता के उच्च आदर्शों का निवेश व्यक्तित्व को अनुकरणीय चरित्र बनाता है। मानवता धर्मों में कोई बुनियादी भेद नहीं मानती। उसके सामने दुनिया के दो बड़े मजहब एक ही ईश्वर की सत्ता की अभिव्यक्ति के दो अलग–अलग रास्ते हैं। प्रसाद ने 'सलीम' कहानी के माध्यम से इस संदेश को देने की कोशिश की है– '' वह प्रेमा को काफिर कहता था। आज उसने चपाती खाते हुए, मन ही मन कहा– बुते–काफिर।''[3] प्रसाद ने नैतिक मूल्यों की रक्षा पर बल दिया है क्योंकि ये समाज के विकास के लिए उपयोगी एवं उसे गति प्रदान करने में सहायक हैं। व्यक्ति को जीवन की विविध स्थितियों में मूल्यों के लिए संघर्ष करना पड़ता है। कोई भी युग हो मनुष्यता सदैव संघर्ष करती है। भारत के समक्ष भी औद्योगिक साम्राज्यवाद ने मूल्य–संकट की स्थिति उत्पन्न कर दी थी। प्रसाद इससे निबटने का मार्ग सुझाते हैं– ''किसी गुरुडम की आवश्यकता नहीं। आर्य–संस्कृति अपना, तामसा, त्याग, झूठा विराग छोड़कर जागेगी। भूपृष्ठ के भौतिक देहात्मवादी चौंक उठेगें। यांत्रिक सभ्यता के पतनकाल में वही मानव जाति का अवलंबन होगी।''[4] प्रसाद ने ऐसे पात्रों को रचा है जिनमें लगातार कर्म की निष्ठा है तो कतिपय मानवीय कमजोरियाँ और विवशताएँ भी। खामियों और खूबियों के संयोग से ही जीवन अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त करता है। 'वैरागी' का वैरागी अपनी कुटिया छोड़कर चला जाता है। किंतु अपने संयम का परिचय देता है। 'विजया' की विधवा 'सुन्दरी' व्यभिचार का शिकार होकर भी जीवन से हार नहीं मानती अपितु विद्रोह करने को आतुर है। वह कहती है कि ''समाज से डरो मत। अत्याचारी समाज पाप कहकर कानों पर हाथ रखकर चिल्लाता है; वह पाप का शब्द दूसरों को सुनाई पड़ता है; पर वह स्वयं नहीं सुनता। आओ चलो, हम उसे दिखा दें कि वह भ्रान्त है। मैं चार आने का परिश्रम प्रतिदिन करती हूँ। तुम भी सिलवर के गहने माँजकर कुछ कमा सकते हो। थोड़े से परिश्रम से हम लोग एक अच्छी गृहस्थी चला लेंगे।''[5]

उस युग में मूल्यों की रक्षा करना कठिन था। किंतु प्रसाद के कथा–पात्र बार–बार प्रयत्न करते हैं, हार नहीं मानते। 'व्रतभंग' कहानी में जल–प्रलय में राधा और नन्दन दुखियों की सेवा करते हैं। नन्दन कहता भी है– गृहिणी का काम करो राधा! कर्त्तव्य कठोर होता है, भाव प्रधान नहीं।[6] किन्तु राधा मानव सेवा के साथ–साथ नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना के लिए कटिबद्ध है और इसके लिए प्रतिकूल परिस्थिति भी उसे विचलित नहीं कर पाती। वह अपने पिता से टकराती है और कहती है कि ''सिद्धि यदि इतनी अधम है, धर्म यदि इतना निर्लज्ज है, तो वह स्त्रियों के योग्य नहीं, पिताजी! धर्म के रूप में कहीं आप भय की उपासना तो नहीं कर रहे हैं?''[7]

यह संघर्ष एक अनुकरणीय मूल्य है। युग–संघर्ष से प्रभावित व्यक्ति के लिए हर पल परीक्षा की घड़ी होती है। विपरीत परिस्थितियों में ही नैतिकता की परीक्षा होती है और प्रसाद के कथा–साहित्य में नायक–नायिकाओं को इस नैतिक संघर्ष में विजयश्री मिलती है –''...शील और संयम की कहीं सीमा भी है ? इरावती ने मन ही मन कहा– 'नहीं' परन्तु प्रकट में उसने कहा – क्यों नहीं हमारे दुःखों का अंत नहीं, अभावों से छुटकारा नहीं फिर तो हमें बुद्धि के आधार पर बीच में से मार्ग निकालना है। काम–गुणों से बचकर मन को आकाँक्षा की लहरों से दूर ले जाना होगा। जहाँ ये सब छू न सके।''[8]

स्पष्ट है कि प्रेम के मधुर क्षणों में, देहधर्म के प्रभाव में, मानवीय कमजोरियाँ नैतिक मूल्यों से समझौता कर लेती हैं किंतु प्रसाद इसके पक्ष में नहीं है उनके यहाँ उदात्त प्रेम वासनारहित है। मगर सतत सक्रियता का पोषक है। सामाजिक जीवन में अन्याय से व्यक्ति निराशा का शिकार हो जाता है किन्तु नैतिक बल उसे देर तक संघर्ष करने की शक्ति प्रदान करता है। जो लोग दुर्दशा को नियति मान कर असत्य और अन्याय के खिलाफ लड़ना बंद कर देते हैं वे कायर होते हैं। प्रसाद के पात्र जीवन परिस्थितियों से संघर्ष करते हैं, जूझते हैं और राष्ट्र के लिए उत्सर्ग होने का आग्रह भी करते हैं।

प्रसाद का साहित्य प्राच्य के सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों के

साथ पाश्चात्य जीवन मूल्यों के समन्वय का प्रयत्न भी है। ''मैं मानता हूँ कि पश्चिम एक शरीर तैयार कर रहा है, किन्तु उसमें प्राण देना पूर्व के आध्यात्मवादियों का काम है। यही पूर्व और पश्चिम का वास्तविक संगम होगा, जिसमें मानवता का स्रोत प्रसन्न धार में बहा करेगा।''[9]

जयशंकर प्रसाद ने अपने साहित्य में पात्रों के मनोभावों के चित्रण में मानवीय भूलों ओर कमजोरियों को भी स्थान दिया है, लेकिन वे अंततोगत्वा नैतिक मूल्यों के विजय के पक्षधर हैं। उनके पात्र अपने द्वन्द्व से मुक्त होकर मानवता की सेवा का मार्ग अपनाते हैं और अपने आत्मसम्मान के लिए उत्सर्ग को भी तत्पर रहते हैं।

विश्व को भारत ने सहअस्तित्व का संदेश दिया। प्रसाद ने अपने विश्लेषण में इतिहास के सभी संघर्षों में मानवता की विजय को ही रेखांकित किया है। उन्होंने इतिहास के प्रसंगों के माध्यम से राजनीति और समाज के संबंधों को परिभाषित करने का प्रयत्न किया है तो साथ ही वे समाज और व्यक्ति का यह दायित्व निर्धारित करते हैं कि उसे राजनीतिक प्रतिबद्धताओं से परे मानवता का पक्ष लेना चाहिए।

* *प्राध्यापक, राजस्थान कॉलेज ऑफ आर्टस, जयपुर*

संदर्भ ग्रंथ

1 डॉ. रामशकल पाण्डेय, मानवाधिकार और मूल्य शिक्षण, पृष्ठ–55, 2005/2006,आगरा।2 जयशंकर प्रसाद, इरावती, पृ.15, 2010, जयपुर 3 जयशंकर प्रसाद, सलीम, इन्द्रजाल, पृ. 22, 1996, दिल्ली।4 जयशंकर प्रसाद, कंकाल, पृ. 97, 2002, दिल्ली5 जयशंकर प्रसाद, विजया, आँधी, पृ. 85–86, 1997, दिल्ली।6 जयशंकर प्रसाद, व्रत–भंग, आँधी, पृ.78,1997, दिल्ली।7 जयशंकर प्रसाद, व्रत–भंग, आँधी, पृ. 74, 1997, दिल्ली। 8 जयशंकर प्रसाद, इरावती, पृ. 41,2010, जयपुर। 9 जयशंकर प्रसाद, तितली, पृ 78, 2008, जयपुर।